प. १२

शिवलिङ्गपूजाविधान

२४३५

शिवपुराणके अनुसार

३६५१
ख. पु. १०

पं० रामविलास मिश्र मन्त्री आर्य्यसमाज
शाहाबाद जि० हरदोई अनुवादित

॥ दोहा ॥

पूजा शिवके लिङ्गकी, जेहि विधि भई प्रचार।
यहि पुस्तक में सो लिखी, शिवपुराण अनुसार ॥

जिसे
पुस्तकाध्यक्ष आर्य्यसमाज अजमेर ने
वैदिक यन्त्रालय अजमेर में
मुद्रित कर प्रकाशित किया

जनवरी सन् १९०३

द्वितीय वार २०००]   [मूल्य)। एक पैसा

गुरु विरजानन्द आर्य्य
२४४८

ओ३म्

शिवलिङ्गपूजाविधान

कालचक्र ने ऐसा पलटा खाया है और अविद्या ने वह दिवस दिखाया है कि लोगोंको शत्रु मित्र का भी ज्ञान न रहा, जो कुछ स्वार्थीजनो ने धर्म की आड़ में उन से कहा, वह उसी को ईश्वरवाक्य मान बैठे। चाहो वह उन की प्रतिष्ठा खोदे, दीन ईमान बिगाड़ दे और उन को संसारमें मुख दिखाने योग्य न रक्खे। पवित्र वेद जैसे सब संसार में सच्चे व सब से प्राचीन धर्मको भूल शत्रुओं के बनाये हुये कल्पित और गबरगंडसे भरे हुवे गप्प १८ पुराणों को अपना धर्म मान लिया, इतना ही नहीं किन्तु उनकी प्रतिष्ठा व मान उससे भी अधिक कर दिया। इससे अधिक खेद की और क्या बात होगी॥

"शिव" जो ईश्वरका पवित्र नाम है, उसके लिये व्यभिचारियोंने बहु२ क़िस्से कहानी जोड़ दिये हैं कि जिनका वर्णन करते लज्जा आती है, लिखते हुये लेख-

जी पराती , परन्तु आजकल थोड़े से कुबुद्धि मुफ़तखोरे अपनी रोटी जाती देख इस प्रकाश के समयमें भी इस अण्डबण्ड को स्थिर रखना चाहते हैं, केवल यही नहीं किन्तु वेदानुयायियों को कलङ्की व अधर्मी बताते हैं, अतः सर्वसाधारण की जानकारी के लिये हम शिवपुराण के श्लोक अनुवाद सहित पाठकों की भेट करते हैं इसलिये कि सत्य और असत्य को परखें, और ऐसे गपोड़ोंको छोड़ें ।

शिवपुराण ज्ञानसंहिता अध्याय ४२

पुरा दारुवने जातं यद्वृत्तन्तु द्विजन्मनाम् ।
तदेव श्रूयतां सम्यक् कथयामि यथाश्रुतम् ॥ ५ ॥
दारु नाम वनं श्रेष्ठं तत्रासन्नृषिसत्तमाः ।
शिवभक्ताः सदा नित्यं शिवध्यानपरायणाः ॥ ६ ॥
त्रिकालं शिवपूजाञ्च कुर्व्वन्ति स्म निरन्तरम् ।
स्तोत्रैर्नानाविधैर्देवं मन्त्रैर्वा ऋषिसत्तमाः ॥ ७ ॥
एवं सेवां प्रकुर्वन्तो ध्यानमार्गपरायणाः ।
ते कदाचिद्वने याताः समिदाहरणाय च ॥ ८ ॥
एतास्मिन्नन्तरे साक्षाच्छङ्करो नीललोहितः ।
विरूपञ्च समास्थाय परीक्षार्थं समागतः ॥ ९ ॥
दिगम्बरोऽतितेजस्वी भूतिभूषणभूषितः ।

चेष्टाञ्चैव कटाक्षञ्च हस्ते लिङ्गञ्च धारयन् । १०॥
मनांसि मोहयन् स्त्रीणामाजगाम हरः स्वयम् ।
तं दृष्ट्वा ऋषिपत्न्यस्ताः परं त्रासमुपागताः । ११।

अर्थ-प्राचीन काल में दारु वन में द्विजों का जो वृत्तान्त हवा उसे हम ने जैसा सुना है वर्णन करते हैं॥५॥ एक दारु नाम सुन्दर बन था तहां ऋषियों का वास था वे शिव के बड़े भक्त थे सदा उसीके ध्यानमें रहते ॥६॥ नाना भांति के स्तोत्रों व मन्त्रों से त्रिकाल शिवजी का पूजन किया करते और ध्यान में लगे रहते थे ॥ ७ ॥ एक दिन ऋषिजन वन में लकड़ियां लेने को गये ॥ ८ ॥ तब शिवजी परीक्षा के अर्थ नीलवर्णमिलित रक्त के सदृश शरीर किये, बुरा रूप बनाये ॥ ९ ॥ नङ्गे, तेजधारण किये हुये,* लिङ्ग हाथ में लिये ॥ १० ॥ स्त्रियों के हृदय को लुभाते हुये उस वन में आये जहां ऋषि रहते थे उनको देख ऋषिपत्नियां भयभीत हुईं ॥ ११ ॥

*क्या इससे बढ़के निर्लज्जता का कोई काम हो सक्ता है? ऐसा काम तो अघोरी किया करते हैं।

नोट—प्रिय पाठक गण ! देखा कि जिस वर्णन का नाम इन्होंने ज्ञानसंहिता रक्खा है वह महा अज्ञानसंहिता है, क्या इससे भी अधिक कोई बुराई की बात हो सक्ती है कि परमात्मा जो महान् पवित्र है और काम क्रोधादि दुर्गुणों से रहित है, वह ऐसा असभ्य स्वांग भर अपने उन भक्तों की स्त्रियों के सङ्ग (जो उसे मानते थे, मानते ही नहीं किन्तु रात्रि दिवस उसे पूजते थे) ऐसी अनुचित कार्य्यवाही करे, जो एक वन्यपुरुष भी नहीं कर सक्ता । अतः हमारी सम्मति में यह सारा कलङ्क वाममार्गियों का है, जिन्होंने निज पातकों का उत्तर बनाने के अर्थ शिवजी के माथे यह दोष लगाया, और वैसा ही उनका स्वरूप वर्णन किया । हम कदापि विश्वास नहीं कर सक्ते कि व्यास, जिनकी बुद्धि वेदान्तादि पुस्तकों से झलकती है ऐसी निर्लज्ज पुस्तक बनायें । जैसे इस समय होली के भडुवे महात्मा कबीर का नाम धर बहुत सी व्यर्थ बातें बना लेते हैं, वैसे ही वेदधर्म के शत्रुओं ने महर्षि व्यास का नाम रख शिवपुराणादि रच लिये हैं । ऐसा कौन सपूत भारत सन्तान

होगा, जिस्को अपने पिता शिव पर यह कलङ्क देख लज्जा न आवेगी ॥

विह्वला विस्मिताश्चैव समाजग्मुस्तथा पुनः ।
आलिलिङ्गुस्तदा चान्याः करं धृत्वा तथापराः॥१२॥
परस्परन्तु संहर्षाद्गतञ्चैव द्विजन्मनाम् ।
एतस्मिन्नेव समये ऋषिवर्य्याः समागमन् ॥ १३ ॥
विरुद्धं वृत्तकं दृष्ट्वा दुःखिताः क्रोधमूर्च्छिताः ।
तदा दुःखमनुप्राप्ताः कोऽयं कोऽयं तथाऽब्रुवन् ॥१४॥
यदा च नोक्तवान् किञ्चित् तदा ते परमर्षयः ।
ऊचुस्तं पुरुषं ते वै विरुद्धं क्रियते त्वया ॥ १५ ॥
त्वदीयञ्चैव लिङ्गञ्च पततां पृथिवीतले ।
इत्युक्ते तु तदा तैस्तु लिङ्गञ्च पतितं क्षणात् ॥१६॥

अर्थ—वे स्त्रियां घबराईं व आश्चर्यित हुईं परन्तु फिर आये पुरुषों को देख हर्ष से वह ऋषियों की स्त्रियां हाथ में हाथ मिला आपुस में* आलिङ्गन करने लगीं

---

* विचारे ऋषियों की स्त्रियों पर भी कलङ्क लगा दिया, क्या ऋषिपत्नियां ऐसी ही होती हैं ? ।

॥ १२ ॥ इतने में ऋषि लोग आगये ॥ १३ ॥ और महादेवजी के अनुचित व्यवहार को देख दुःखी हुवे, क्रोध से विक्षिप्त हो कहने लगे "यह कौन है"? ॥ १४ ॥ जब शिवजी कुछ न बोले, तब ऋषियों ने शाप दिया कि "तुमने बुरा कर्म किया ॥ १५ ॥ तुम्हारा लिङ्ग कटके गिर पड़े" इतना कहते ही तुरन्त पृथ्वी पर गिर पड़ा ॥

नोट—हमें इस पर नोट लगाते लज्जा आती है न्यायप्रिय पाठक स्वयम् समझ लें। हे पौराणिक भाइयो! क्या आप ऐसे गपोड़ों को वेदों का ज्ञान बताते हैं? आप की व आप के चेलों की बुद्धि प्रशंसनीय है ॥

तल्लिङ्गञ्चाग्निवत् सर्वं ददाह यत् पुरः स्थितम्।
यत्र यत्र च तद्याति तत्र तत्र दहत् पुनः ॥ १७ ॥
पाताले च गतं तच्च स्वर्गे चापि तथैव च।
भूमौ सर्वत्र तद्भ्रान्तं कुत्रापि तत् स्थितं न हि १८
लोकाश्च व्याकुला जाता ऋषयस्तेऽपि दुःखिताः।
न शर्म्म लेभिरे क्वापि देवाश्च ऋषयस्तथा ॥ १९॥
ते सर्वे च तदा देवा ऋषयो ये च दुःखिताः।
न ज्ञातश्च शिवो यैस्तु ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥२०॥

तत्र गत्वा त तत् सर्वं कथितं ब्रह्मणे तदा ।
ब्रह्मा तद्वचनं श्रुत्वा प्रोवाच ऋषिसत्तमाम् ॥ २१ ॥

ब्रह्मोवाच

ज्ञातारश्च भवन्तो वै कुर्वन्ति गर्हितं पुनः ।
अज्ञातारो यदा कुर्युः किं पुनः कथ्यते तदा ॥ २२ ॥
विरुध्यैवं शिवं देवाः कुशलं कः समीहते ।
गृहे समागतं दूरादतिथिं यः परामृषेत् ॥ २३ ॥
तस्यैव सुकृतं नीत्वा स्वीयञ्च दुष्कृतं पुनः ।
संस्थाप्य चातिथिर्याति किं पुनः शिव एव च ॥ २४ ॥
यावल्लिङ्गं स्थिरं नैव जगतां त्रितये शुभम् ।
जायते न तदा क्वापि सत्यमेतद्वदाम्यहम् ॥ २५ ॥
भवद्भिश्च तथा कार्य्यं यथा स्वास्थ्यं भवेदिह ।
इत्युक्तास्ते प्रणम्योचुः किं कार्य्यं तत् समादिश ॥ २६
इत्युक्तश्च तदा ब्रह्मा तान् प्रोवाच तदा स्वयम् ।
आराध्य गिरिजां देवीं प्रार्थयध्वं शुभां तदा ॥ २७ ॥
योनिरूपं भवेच्चेद्वै तदा तत् स्थिरतां भजेत् ।
तदा प्रसन्नां तां दृष्ट्वा तदेवं कुरुते पुनः ॥ २८ ॥

अर्थ-उस लिंगने उन सब पदार्थों को जो उसके सन्मुख थे,* अग्निकी नाईं भस्म कर दिया। जहां २ वह लिंग गया वहां २ वैसे ही जलाता चला गया ॥ १७ ॥ पाताल स्वर्ग पृथ्वी आदि सब स्थान जलाता, † उछलता, कूदता किसी स्थान पर स्थिर न हुआ ॥ १८॥ तब सब जन विकल होगये, और वे ऋषि भी दुःखी हुये, कहीं पर ऋषियों व देवताओं को सुख न मिला ॥ १९ ॥ तब वे देवता व ऋषि जो दुःखी होरहे थे, और जिन्होंने शिवजी को नहीं ×पहचाना था, सब ब्रह्मा के पास गये२० और सब हाल ब्रह्मा से कहा। ब्रह्मा उनके वचन सुनके

---

* शिवलिंग क्या था बला था ।

† इसने तो.........................को भी मात किया ।

× पौराणिक भाइयो ! तुम तो देवताओं को अन्तर्यामी बताते हो और तुम्हारा पुराण ना समझ ।

बोला कि ॥ २१ ॥ तुमने जान बूझके *दुष्कर्म किया, अब जो †अज्ञान से कुकार्य्य करे, उसको क्या कहा जावे ॥ २२ ॥ हे देवताओ ! शिवजीको क्रोधित करके कौन सुखी रह सकता है ॥२३॥ जो दूर से आये हुवे का अतिथिसत्कार नहीं करता, उसके जितने सुकर्म हैं, उनको तो वह लेजाता है, और अपने किये दुष्कर्मों को छोड़जाता है। तिसपर शिवजी से अतिथि का अपमान करना थोड़ीबात नहीं॥२४॥देखो जबलों यह लिंग स्थिर न होगा, तबलौं जगत् में कहींपर सुख नहोगा। यह मैं सत्य कहता हूं ॥२५॥ अब तुमको ऐसा करना चाहिये, जिससे यह लिंग स्थिर हो। यह ब्रह्मा ने उनसे कहा, तब वे ऋषिगण ब्रह्मा को दण्डवत्कर बोले कि अब हमें क्या करना चाहिये? आप बताइये ॥२६॥ तब ब्रह्मा बोले कि तुम पार्वती का भजन करके उसकी स्तुति करो ॥ २७ ॥ जब पार्वती योनिके

---

* वाह २ अपनी स्त्रियोंका धर्म बचाना दुष्कर्म हुआ क्या वे उनको भ्रष्ट होने देते।

† पहले तो लिखा जानते बूझते, और अब कहा अज्ञान से। झूंठे को स्मरण शक्ति नहीं होती।

सदृश होजाय तब तुम इस लिंगको उसमें डाल देना॥२८॥

नोट—उक्त श्लोकोंमें जैसी कुछ अश्लील व सभ्यता-विरुद्ध बातें लिखी हुई हैं, वह सब पर प्रकाशित हैं, हम अधिक नोट चढ़ाना नहीं चाहते, और धर्मसभा के सहायकों और महामण्डलवालों का ध्यान आकर्षित करते हैं कि लज्जित होवो ॥

एवं कृते च स्वास्थ्यं वै भविष्यति न संशयः ।
इत्युक्तास्ते तदा देवाः प्राणिपत्य पितामहम् ॥ ३७ ॥
शिवस्य शरणं गत्वा प्रार्थितः शङ्करस्तदा ।
पूजितः परया भक्त्या प्रसन्नः शङ्करस्तदा ॥ ३८ ॥
पार्वतीश्च विना नान्या लिंगं धारयितुं क्षमा ।
तया धृतश्च शान्तिश्च गमिष्यति न संशयः ॥ ३९ ॥
गृहीत्वा चैव ब्रह्माणं गिरिजा प्रार्थिता तदा ।
प्रसन्नां गिरिजां कृत्वा वृषभध्वजमेव च ॥ ४० ॥
पूर्वोक्तश्च विधिं कृत्वा स्थापितं लिंगमुत्तमम् ।
मन्त्रोक्तेन विधानेन देवैश्च ऋषिभिस्तदा ॥ ४१ ॥

अर्थ—प्रथम उसे प्रसन्न करो, ऐसा करने से अवश्य यह लिंग स्थिर होजायगा, और जगत् में स्वस्थता हो जायगी। जब ब्रह्मा ने ऐसा कहा, तो वे ऋषिजन उसको

प्रणाम करके ॥३७॥ शिवजी के पास गये। बड़ी भक्ति से प्रार्थना की और पूजन किया। जब शिवजी प्रसन्न हुये ॥ ३८॥ तो बोले, कि पार्वती के अतिरिक्त इस लिंग के धारने की शक्ति अन्य किसी में नहीं है जब इसे धारण करेगी तो यह शान्त हो जायगा, इसमें सन्देह नहीं॥३९॥ तब उन ऋषियों ने ब्रह्मा को संग ले पार्वती के निकट जाके प्रार्थना की और शिव को भी प्रसन्न करके॥४०॥ विधिपूर्वक देवता व ऋषियों ने मन्त्र पढ़ के उस उत्तम लिंग को पार्वती में स्थापित किया (तब से ही लिंग पूजा चली) ॥

नोट—यह श्लोक ऐसे अश्लील हैं कि हमें नोट लगाते लज्जा आती है, पर इतना अवश्य लिखे देते हैं कि संसार में ऐसा कोई मत नहीं है कि जिसने ऐसी व्यर्थ बातों को उचित रक्खा हो। हबशी जो सबसे मूर्ख गिने जाते हैं, वे भी कदापि निज माता पिताके लिये ऐसी कहावत नहीं मानते, जैसी कि शिवपुराण वालों ने अपनी माता पार्वती व पिता शिव के अर्थ घढ़ी हैं। प्यारे हिन्दुओ ! तनिक न्याय दृष्टि से देखो, कि ऐसी सभ्यता वि-

रुद्ध अश्लील बातों को मान के क्या आप अन्य मतावलम्बियों को अपना मुख दिखा सक्ते हैं? कदापि नहीं। प्यारो! अब तो चेतो और इन निरर्थक बातोंको त्यागो। इसी कारण सहस्त्रों हिन्दू ईसाई व मुसलमान होगये व हो जायंगे जो आप कामी व भोजनभट्टों की बातें मानेंगे। प्रियवरो! आप केवल वैदिक धर्मको मानो और इनको त्यागो। लोग तुम्हें बहुत बहकायंगे, फुसलायंगे, तुम्हारी हंसी उड़ायंगे पर याद रक्खो कि सत्य सत्य ही है और इनका कहना केवल रोटी के अर्थ है, न कि धर्म के निमित्त। हम ऐसेर धूर्तपनकी और भी धूलि उड़ावेंगे॥

शिवके ठीक २ अर्थ लीजिये "शिवु, कल्याणे,, इस धातुसे शिव शब्द सिद्ध होता है।

"बहुलमेतन्निदर्शनम्,, इससे शिवु धातु माना जाता है। जो कल्याणस्वरूप और कल्याण करनेवाला है उसी को शिव कहते हैं। और यह गुण एक परमात्मा ही के हैं अतः शिव नाम उस निर्विकार ज्योतिःस्वरूप का है॥

फल—परमानन्द व मुक्ति चाहनेवाले ऐसे कामी और ऐसे कुरूप की उपासना व ध्यान करना तो एक और उसे

देखना भी नहीं चाहते। यह तो होलीके होलियारोंके योग्य है। धन्य हैं वे, जो सच्चिदानन्द स्वरूप परमात्माके ध्यान में निमग्न रह सदा कल्याणके भागी होते हैं॥

लिङ्गपुराणसे पूर्व बुद्धदेव हो चुके थे, जिसको प्रायः लोग बौद्धावतार कहते हैं, (शिवपुराण पूर्वार्द्धखण्ड अध्याय ५ श्लोक ३ से ९ तक)

परन्तु इतिहासवेत्ताओं ने जयस्तम्भ अथवा स्तूपों और बौद्ध मन्दिरों और आर्य्यावर्त्त, लङ्का, ब्रह्मा, चीन और तिब्बत की पुस्तकों और अजायबघर की मूर्तियों से सिद्ध किया है कि बुद्ध विक्रमीय संवत् से ६१५ वर्ष पूर्व हुए थे और ८० वर्षकी आयुमें उनका देहान्त होगया था जिसको संवत् १९५१ विक्र० तक २५६५ वर्ष होते हैं और व्यासजी को ४९९४ वर्ष हुवे हैं अर्थात् बुद्ध २४२९ वर्ष व्यासजी से पीछे हुवे हैं अतएव व्यासजी पुराणोंके कर्त्ता नहीं हो सकते।

२—रामानुज विक्रम की १२ वीं शताब्दीमें हुवे थे, इस में सब इतिहासवेत्ताओं की सम्मति है, और रामानुज ने वैष्णव मत चलाकर शंख, चक्र, गदा, पद्मसे लोगोंको

चक्राङ्कित बनाया, परन्तु वैष्णवमत का खण्डन लिङ्गपुराण में है । यथा—

शङ्ख चक्रे तापयित्वा यस्य देहःप्रदह्यते ।
जीवन्कुणपस्त्याज्यः सर्वधर्मबहिष्कृतः । १ ।

अर्थ—जिस के शरीर पर तपाकर शङ्ख चक्र की छापें लगाई गई हैं वह जीतेजी मुर्दा और सर्व धर्मों से पतित के समान त्यागने योग्य हैं ।

इससे स्पष्ट है कि रामानुज के मत के पीछे उनका खण्डन लिङ्गपुराण में हुआ " प्राप्तौ सत्यान्निषेधः,, अर्थात् जो वस्तु है, उसका ही निषेध होता है और लिङ्गपुराण का नाम १८ पुराणोंमें है, रामानुज विक्रम की १२ वीं शताब्दी में हुवे थे अर्थात् आज तक उनको हुवे७५१ वर्ष होते हैं और व्यासजी को जैसा ऊपर कहा है ४९९४ वर्ष हुवे हैं अतएव व्यास से रामानुज ४२४६ वर्ष पीछे हुवे, इस लिये व्यास लिङ्गपुराणके कर्ता नहीं हो सक्ते हैं। (और लिङ्गपुराण न नहीं) ...।

2848